मनुष्य बनो

शरणागति

शुभ संकल्प,

क्षमा,

प्रेम,

निष्काम कर्म,

ब्रह्मचर्य पालन,

'मनुष्य बनो' के नियम

१—शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिकता के नियमों का वास्तविक दृष्टि-कोण से प्रचार करना और प्रेम, सभ्यता, आदर, शिष्टाचार, सदाचार सहनशीलता और संयम की शिक्षा देना इसका मुख्य उद्देश्य है। मनुष्य बनना और बनाना।

२—सन्त महात्माओं और ऋषियों की वाणी को सरल, सुबोध और साधारण भाषा में प्रचार करना।

३—सामाजिक उन्नति कारक तथा देशहित कारक लेखों को भी स्थान दिया जायगा।

४—किसी धर्म, पंथ या सम्प्रदाय के खण्डन सम्बन्धी लेख नहीं छापे जायेंगे।

५—यह पत्र प्रत्येक मास की १५ तारीख को प्रकाशित हुआ करेगा।

६—लेखों के घटाने बढ़ाने और छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को होगा। लेख सम्पादक के नाम भेजे जाँय।

७—ग्राहकों को पत्र लिखते समय ग्राहक नम्बर व पता साफ साफ अवश्य लिखना चाहिये। उत्तर के लिये जबावी कार्ड आना चाहिये वी० पी० पी० से पत्रिका नहीं भेजी जायगी। इसका वार्षिक मूल्य ८—०० है।

८—यदि किसी मास का पत्र ठीक समय पर न पहुँचे तो पहले अपने यहां डाकखाने से पूछताछ करके वहां से जो उत्तर मिले व अगला अङ्क निकलने से एक सप्ताह पूर्व तक कार्यालय में पहुंचने पर ही दूसरी प्रति बिना मूल्य भेजी जा सकेगी।

९—प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र, ग्राहक होने की सूचना, मनीआर्डर आदि मैनेजर के नाम से भेजने चाहिये। मनीआर्डर कूपन पर अपना पता साफ साफ लिखना चाहिये। और पते की तबदीली भी।

प्रकाशक

R. S.

ओ३म् पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्ण मदुच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते ॥

❀ मनुष्य बनो ❀

वर्ष ३२	भाद्रपद संवत २०३९ वि०	सं० १०

प्रेम

प्रेम की सड़कें देखीं यार ॥टेक॥

पहली सड़क सुनहरे रंग की, खिली बसन्त बहार ।
जगमग जोत दिया बिन बाती, जोती जोत मझार ॥ प्रेम

दूजी सड़क लाल रंग बाना, वीर बहूटि के रंग ।
चली सुरत अँखियाँ भई लाली, सुनी थाप मृदंग ॥प्रेम

तीजी सड़क नील परवत पर, चन्द्र जोत उजियारा ।
अमी कुन्ड बने दायें बायें, बरनत बने न पारा ॥प्रेम

चौथी स्वेत बरन छबि अद्भुत, देख सुरत हरषानी ।
यहां आये मन शान्ती आई, सो नहीं जाय बखानी ॥प्रेम

चारों सड़क लांघ पद सूझा, प्रेम का महल दिखाना ।
सतगुरु का दर्शन तब पाया, मिल गया ठौर ठिकाना ॥प्रेम

घट के भीतर चार सड़क यह, प्रेमी पन्थी जाने ।
बिन देखे -परतीत न आवे, कैसे कोई माने ॥प्रेम

राधास्वामी दया साध की संगत, हम धुरपद चल आये ।
प्रेम की धार हृदय से फूटी, प्रेम में आय समाये ॥प्रेम

सम्पादकीय–

प्रिय पाठक गण ! आपके हाथों में इस समय माह अगस्त का अंक है जो कि इस वर्ष का १० वां अंक है। कुछ परिस्थिति वस हम आपकी सेवा समय से नहीं कर सकें। जिसमें सबसे बड़ी समस्या इस वर्ष आर्थिक समस्या थी जा कि अब भी ज्यों की त्यों बनी हुई है। अतः हम अपने समस्त ग्राहक बन्धुओं से निवेदन करते हैं कि जिन भाइयों ने अभी तक इस वर्ष का व पिछले वर्ष का वार्षिक शुल्क नहीं भेजा है। वह शीघ्रता शीघ्र भिजवाने की कृपा करें। ताकि हम परमसन्त दयाल फकीर चन्द जी महाराज, शिवब्रतलाल जी महाराज एवं अन्य सन्तों के विचारों, शिक्षा एवं उनके आदर्शों को अधिक से अधिक लोगों में फैला सके एवं जीवन का सही मार्ग दर्शन कर सकें। अब यह काम हमारा नहीं आपका भी है। चूंकि गुरू का ऋण तो सभी को चुकाना होता है। अतः हमें पूर्ण विश्वास है कि सभी बन्धु एवं मातायें हमारे इस कार्य में सहयोग कर अधिक से अधिक ग्राहक बनायेंगे और बकाया चन्दा भेजकर हमें इस कार्य को सुचारू रूप से चलाने को प्रोत्साहित करेंगे।

राधास्वामी।

सुरत शब्द योग

वन्दना

बन्दनम् सतज्ञान दाता, बन्दनम् सतज्ञानमय।
बन्दनम् निर्वाण राता, बन्दनम् निर्वाणमय॥
भक्ति मुक्ति योग युक्ति, आपके आधीन सब।
आप ही सिन्धु सद्गति, जीव जन्तु मीन सब॥
आप गुरु सतगुरु दया, अरु प्रेम के भण्डार हैं।

आप कर्ता धर्ता हैं, करतार जगदाधार हैं॥
ऋद्धि सिद्धि शक्ति नौ निधि, हैं चरण में आपके।
बच गया भव दुख से, आया शरण जो आपके॥
भक्ति दीजे नाम की, सतनाम में विश्राम दे।
राधास्वामी अपना कीजै, राधास्वामी धाम दे॥

गुरु नानक की शिक्षा

आज गुरु नानक का जन्म दिन है। मैं हिन्दू हूं। ब्राह्मण हूँ। वेद शास्त्र का मानने वाला हूँ। उस मालिक की लगन महर्षि शिव-ब्रतलाल जी महाराज के पवित्र चरणों में ले गई। उन्होंने मेरी सुरत (आत्मिक धार) को बड़ी कोशिश से ईश्वर भक्ति अथवा अन्य भक्तियों से हटा करके गुरु भक्ति या नाम भक्ति में लगाया। 'बचन सार' भाग दोयम एक पुस्तक है जो मेरे नाम, जब मैं बगदाद में था एक शब्द प्रतिदिन महर्षि (शिव) जी लिखा करते थे। उसमें उन्होंने मुझे सन्तमत की ओर आने की हिदायत की थी। सन्तों में संत कबीर, राधास्वामी दयाल, नानक साहब की प्रसंशा की थी। हर एक सन्त के विषय में उस उपरोक्त नामी पुस्तक में नौ नौ, दश दश कड़ियां भजनों को लिखी हुई थीं। मैं एक सचाई प्रिय मनुष्य हूँ। मैंने किसी बात को उस समय तक माना नहीं, जब तक उसकी परीक्षा न कर ली।

गुरु नानक साहब ने क्या शिक्षा दी? सतनाम, सच खण्ड अर्थात सतनाम का जाप और सच खण्ड में पहुँचना। मालिक का नाम उन्होंने अकाल पुरुष रक्खा है। यह तीन बातें हैं। बाकी जो कुछ उन्होंने किया, वह हैं नीचे की बातें। हिन्दुओं में पूर्णमासी का दिन और अमावस का दिन बहुत ही मुख्य माना है। क्यों? पूर्णमासी क्या है? उसमें पूर्ण चांदनी (प्रकाश) रहता है। अमावस को हर तरफ से अँधेरा रहता है।

सच खण्ड या सतनाम या अकाल पुरुष तक पहुंचने के दो मार्ग

हैं। एक पूर्णमासी, दूसरा अमावस। पूर्णमासी हमारे मन की वह अवस्था है जहाँ हमारे जीवन की मानसिक और शारीरिक सब सुविधायें प्राप्त रहती हैं अर्थात जीवन को खुशी से व्यतीत करने के लिये जिस जिस वस्तु की हमारी शारीरिक और मानसिक अवस्था को चाहना रहती है, वह हमको प्राप्त होती रहती है। जिसको यह अवस्था प्राप्त है केवल वही इस सतनाम को या सच खण्ड या अकाल पुरुष को प्राप्त कर सकता है। जब जीवन की शारीरिक और मानसिक आवश्यकता ही मनुष्य की पूरी नहीं हैं उसकी सुरत किसी रूप में भी शान्ति से उस मन्जिल या अवस्था को प्राप्त नहीं कर सकती। यह गुरु नानक का मार्ग है।

दूसरा अमावस का मार्ग है। ऋषियों ने देखा कि इस वस्तु को राजे महाराजे या वह लोग जिनकी दुनियां की आवश्यकतायें पूरी हैं वह प्राप्त कर सकते हैं तो उन्होंने त्याग का मार्ग बना दिया। सब कुछ त्याग दो। तुम्हें किसी बस्तु की आवश्यकता का अहसास न हो। मन की अवस्था को सन्तोष देने को दो ही बाते हैं या तो पूर्ण रूप से हर वस्तु प्राप्त हो, फिर लालसा न रहेगी या सब कुछ त्याग दो. तो मन की दशा ठीक रहेगी। जितने भी हम संसारी लोग हैं जो इस सतनाम को या अकाल पुरुष को प्राप्त करने का यत्न करते हैं, फैल हो जाते हैं। यह करनी का (अमली) जीवन है। मन में दुनियां की आशाओं या आवश्यकताओं की चाह जब तक बाकी है तो जब तुम ध्यान करोगे तो सतनाम आ ही नहीं सकता। प्रयत्न हम सब लोग करते हैं। फिर या तो उस मार्ग को फारिगुलबाल (सर्व सम्पन्न)- लोग प्राप्त करते हैं या वह जो अपने मन से पूर्ण त्यागी हैं।

॥ मनुष्य बनो ॥

दूसरी किश्त

" फ़क़ीर चमन पत्रावली "

१९७२ में वैशाखी से पहले मैं हजूर के पास हुशियारपुर गया उससे पहले केवल पत्र व्यवहार ही चल रहा था। जब इन के पास गया, उन्होंने मुझे देखा कहा क्या चाहते हो ? मैंने उत्तर दिया कि घर में रहते अभ्यास करते हुऐ ही पूर्णता प्राप्त कर लूँ ! हजूर ने पीठ पर हाथ रखते हुये कहा कि जाओ ऐसा ही होगा । यह कह कर वह सो गये व उन्होंने श्री गिरधारी लाल जी से कहा कि इसे "पांच नाम की व्याख्या' व गुलिस्तान हजार दास्तान दो पुस्तकें पढ़ने को दे दो ताकि शका समाधान हो जावे। उनके सोते-सोते मैंने दोनों पुस्तकों का सारांश देख लिया। बहुत सी शंकाएँ समाप्त हो गई। एक बात लिखनी आवश्यक है कि हजूर के पास आने से पहले मैं १८ वर्ष की आयु से राजयोग का साधन कर रहा था। प्राणायाम व समाधि लगा लेता था। हजूर जब उठे पूछा क्या चाहते हो मैंने कहा अब नाम की इच्छा है, उन्होंने उत्तर दिया कि वह १९४२ से नाम देना बन्द कर चुके हैं। तुम यहाँ ठहरो और प्रातः सत्संग सुनो दूसरे दिन रविवार था। सत्संग हुआ। हजूर ने सबके सामने नाम दान अपने ढ़ग से दे दिया और साधन करने को कहा। वह सत्संग भी पूरे का पूरा "मनुष्य बनो" में छप गया था। उन्होंने कहा था कि इस सत्संग को मनुष्य बनो में छपवा देना। आगे पत्र व्यवहार इस भाँति से है।

होशियार पुर
१-६-७२

प्यारे दुर्गा दास

राधास्वामी

पत्र मिला। अपने अन्दर में साधन सुमरन ध्यान और भजन करते रहो। विश्वास और श्रद्धा रखो। दुनिया भी बनेगी और दोन

भी बनेगा। स्वार्थ परमार्थ दोनों बनेंगे। विश्वास बड़ी चीज है। सतगुरू हर समय तुम्हारे दिल में तुम्हारे साथ रहता है। मैं २/६ तक हुशियार पुर में हूँ जब चाहो आ सकते हो।

आप का फकीर

मानवता मन्दिर
७-६-७२

प्रिय दुर्गा दास
राधास्वामी,

सुमरन, भजन ध्यान किए जाओ। मौज होगी तो मेल हो जावेगा।

आपका फकार

हुशियार पुर
१६-६-७२

दुर्गा दास जी
राधास्वामी,

पत्र मिला। मैं २६/६ को चलकर २८/६ को कुल्लू पहुँच जाऊँगा और १४ या१५ जुलाई को वापिस आऊँगा।

आपका फकीर

कुल्लू
४-७-७२

प्यारे दुर्गादास चमन
राधास्वामी।

पत्र मिला। मेरे विचार में मैं तमाम डाक का उत्तर देता हूँ न मालूम आपको उत्तर क्यों नहीं मिला। पहले गुरू के सन्देश को आप अमल मे लाओ फिर दूसरों को सुनाने का प्रयत्न करो। सच्चे मन से अपने आप को उस सतगुरु के सानने जो आपके घट में रहता है प्रार्थना किया करो। मैं आज कल कुल्लू में हूँ। पन्द्रह जुलाई तक

हुशियारपुर जाऊँगा ! सुमरन, ध्यान और भजन, राधास्वामी
सुमरन गुरु स्वरूप का ध्यान और अन्तर की आवाज को स
भजन है ।

आपका फकीर
होशियारपुर
२४-७-७२

दुर्गा दास चमन
राधास्वामी ।

चमन वन के रहो । खुश रहो । जहाँ रहो खुशी बखेरो । साधन प्रतिदिन हो । गुरु या मालिक को अपने से कभी जुदा मत समझो । जीवन में मालिक आपको बहुत दे । किसी दुखिये की सहायता करते रहो ।

आपका फकीर

आचार्य कृष्णमोहन श्रीवास्तव फकीर सत्संग केन्द्र मिश्रित तीर्थ
सीतापुर की कलम से—

सर्व व्यापक, सर्वशक्तिमान, श्री परम दयाल जी को सप्रेम,
राधास्वामी

अर्ज हाल यह है कि श्री कुन्दनलाल जौड़ा साहब की तहरीर कर्दा १९-३-८२ की चिठठी बगरज शिरकत सालाना बैसाखी सत्संग १३ व१४ अप्रैल सन् ८२ मिश्रिख मुझे मौसूल हुई । जिसनें मेरी तलबी थी । लिखा था, मैं भी अपना जातो अनुभव बमौजिब तालीम श्री हुजूर महाराज वहां आकर जाहिर करूँ । मैं खाक सार उलफकीर सक्ते में आ गया । क्यों कि रूहानी दर्शगाह में तिफ्ल मक्तब और दुनियाबी तालीम में अधूरा पर तामील हुक्म बजाना ही था । बमौजिब तहरीर में तारीख मुकर्रेरा पर पहुँचा और जल-सय आम के सत्संगियों की जमात में जा बैठा । और महापुरूषों के प्रवचनों से फैजयाब होता रहा ।

चूँकि मैं ३-४ योम वहां रहा बदी वजह वहाँ की वक्ती फिजा से मुतासिर हुए बगैर न बच सका । " चिराग तले अंधेरा " ।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY PURNADAYAL

१४-४-८२ अलस सुबह बाद अभ्यास मन्दिर के कमरा नं० २२ जहां मैं मुकीम था वहां ख्याल आया, जात मुतलक सर्व आधार श्री हुजूर महाराज दूर अन्देश, पुरूष कामिल थे। उन्होंने अपनी हयात में मानव मन्दिर पत्रिका में विल का जिक्र किया था। अब जो जानशीनी हुई वह भी लाजबाव है, पर यहां चेमे गोइयां कैसी। क्या हमारे ऐसे निबल, अबल, अज्ञानी कोरे के कोरे ही रहेगें या मेरी तशफ्फी के लिये कोई ठोस प्रमाण मिल सकेगा।

इसी शाम जब में अमरीकन विल्डिंग में श्री मानव दयाल जी महाराज से मिलने पहुँचा, वहां ऐसा मौका था कि एक साहब पंजावी तहरीर में लिखा हुआ वसीयत नामा बहक श्री ईश्वर चन्द्र शर्मा जी महाराज मिन्जनिब श्री फकीरचन्द्र जी महाराज पढ़ रहे थे। जिस पर मैंने खुद देखा दस्तावेज के हासिये पर श्री परम दयाल जी महाराज के वखत अंग्रेजी दस्तखत थे। यह मेरा चश्मदीद सबूत मेरे लिये काफी था। फिर भी मैं अपने मन माया की ढिठाई का जिकर करता हूँ।

सुबह १५-४-८२ मन में संकल्प उठा यदि श्री मानव दयाल जी महाराज जानसीनी गुरू हैं और श्री हुजूर महाराज के सभी कार्य पूरे करेंगे तो वह मुझसे उसी तरह हमदर्दी से पेस आये जिस तरह श्री हुजूर महाराज मेहरबानी फरमाया करते थे। नेज वह खुद मुझसे मुतवज्जे होकर कहे कि में भी कुछ कहूँ। तभी मैं समझूंगा कि यह भी अन्तरयामी हैं।

अपना संकल्प लेकर साढे सात बजे मैं भी सत्संग हाल में पहुँचा और तख्त से कुछ दूर प्रवचन सुनने बैठ गया। ८ बजते ही श्री मानव दयाल जी महाराज रौनक अफरोज हुये। इत्तफाम की बात शब्द पढ़ने वाली माई श्री मती, सीता जी के आने में ताखीर हुई तभी श्री मानव दयाल जी महाराज ने मुझसे संकेत करते हुये फकीर शब्दावली

देते हुए बोले, लो इसमें से कोई शब्द पढ़ो।

हस्ब उल्हुकुम मैं आगे बढ़ा, गुरू महिमा का शब्द निकला, जिस को मैं पढ़ने लगा। जिसकी व्याख्या श्री मानव दयाल जी महाराज कहने लगे। चूँकि हिन्दी मेरी यादरी जबाव नहीं बदीं बजह में अट-पटा रहा था और मन ही मन चाहता था अब बस कर दें। अभी मुश्किल से कुछ ही लाइनों की वजाहत हो पाई थी कि श्री मानव दयाल जी महाहाज फरमाते हैं। आज सिर्फ इतना ही काफी हैं। फिर मुकर्रर बोले हाँ–आप भी ',आचार्य हैं'' कुछ आप भी कहें।

यह सुन कर मुझे अचम्भा सा हुआ। मेरे सकल्प का मुझे मुहँ तोड़ जबाब मिला। जिसको मैं ही महसूस कर रहा था क्यों कि यह मेरे मन की गुप्त बात थी अब प्रमाण मिलने में मेरे लिये कोई कसर बाकी न थी मेरी तशफ्फी हो चुकी थी मेंने सच्चे दिल से उनके कदमों को बोसा दिया श्री महाराज को जानसीनी फकीरमय तशलीम करते हुए लब से उनके कदमों को बोसा दिया श्री महाराज ने मेरी पीठ पर थपकी देते हुए मेरे सर पर हांथ फेरा और मुझे ऊपर उठाया मुझे याद आया ३ अक्टूबर सन् ६५ श्री हुजूर महाराज ने मुझे इसी तरह बमुकाम दिल्ली उठाया था। मुझे ढ़ाढ़स हुआ कि सबकी सरप रस्ती होती रहेगी और रूहानियत की शमां रौशन रहेगी। मेंने अपनी जेब से एक परचा निकालते हुये श्री हुजूर महाराज का ध्यान किया और तामीले हुक्म में अपनी आप बीती हाजरीन सतसंग से अर्ज की। जाहीरा जिस्म जबान मेरी थी पर लफ्जों की रवानी में गैबी ताकत थी, मन में ताजी उमंग थी। द्दर अस्ल यह वक्त गुरू का बल था मैंने जो कुछ अर्ज किया वह श्री हुजूर महाराज की तालीम अपने विश्वास गुरु, भवित, ब्रह्मचर्य के मुविथादता जिससे मुझे सही रास्ता मिला, जिसको आप बगौर सुने।

जिक्र छत्तिस का मैं तो करता हूँ, हैदराबाद जा पहुँचता हूँ।
है मुहल्ला एक धूलपेट वहाँ महर्षि जो पधारा करते जसां।।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

हम सभी छोटे-छोटे बच्चे थे, उनके चरणों में सर को रखते थे।
मेरे वालिद के मौर सर वो थे, उनको भगवान ही समझते थे॥
ध्यान, सुमिरन की विधि बताते थे, सबको सत्संग भी कराते थे।
चूंकि अन्तर मुखी यह करनी थी, मेरे पल्ले न कुछ भी पड़ती थी।
भागवत गीता को में सुनता था, दिल में अपने यही समझता था।
कोई भगवान इस जगत का है, सारी दुनियां का वो ही मालिक है॥
उस उमर में हो मुझको भाया था, कृष्ण का इष्ट में बनाया था।
झांकियां खूब में बनाता था, देखा देखी ही पूजा करता था।
लोग मुझको भक्त समझते थे। सब बड़े छोटे कदर करते थे।
गौर करके सुनो मेरे कुछ हाल, जिक्र करता हूँ उनका में फ़िलहाल॥
हम उमर मेरे साथी लड़के थे, उनमें बदतर अक्ल कुछ रखते थे।
संग का दोष मुझको होता था कोताह अक्ली समझ का धोखा था॥
पढ़ने लिखने में वक्त जाता था, खाक पत्थर नयाद रहता था।
रोज रोचक भजन में गाता था, मन्नतें खूब मैं मनाता था॥
(।।) मेरे पिता जी ने सन् ३९ में मुझे यू० पी० भेजा (।।)
मेरे नाना व नानी चिन्तित थे, बाहमी मशविरा भी करते थे।
सन् चवालीस में मुझको सांध दिया, या गृहस्थी से मुझको बांध दिया
कुछ दिनों बाद होश जब आया, लड़का लड़की काबोझ में पाया।
यूं ही बढ़ती रहीं मेरी बाड़ी, बोझिल होती गयी मेरी गाड़ी॥
अब तो रहती थी रोज ही यह खोज, कैसे मुझको मिले खुदाई मौज।
मजबहन योग यह चेताने लगे, गुरु से मिलती मदद बताने लगे॥
तीर्थ मिश्रिख पे में तो रहता था, साधू सन्तों से सिलता जुलता था।
मक्नातीसी कशिश न पाता था, इसलिए उस तरफ न खिचता था॥
मुझको हरदम एक खोज रहती थी, इसलिए जुस्तजू भी बढ़ती थी।
पूज्य वालिद दक्खिन में रहते थे, नन्दू भाई से उन्म करते थे॥
भाई जी का पता था मेरे पास, मैंने उनको लिखा था पुर विश्वास॥
... का कौन गुरु कहां पर है, कैसे मुझको मिले जतन क्या है।

खत पर आया ग्रहस्थ चोले मैं, सतगुरुष आया है झमेले में
लोग कहते परम दयाला है, मुरतबा उनका सब से आला है ॥
सबको वह सीख देता रहता है. काम करता हुआ अकरता है ।
देखने में बिचरता फिरता है, असलियत क्या है राज परदा है ॥
दिल्ली सत्संग में चले जाना, खुद को उनके सुपर्द कर आना ।
सतगुरू तुम पर मेहर कर देंगे जाके देखो वह झोली भर देंगे ॥
पाके चिठ्टी में चल दिया एक दम, पहुँचा तो सर हुँआ मेरा खम ।
शेर ऐसे निडर वह बैठे थे, देखने में वह दुबले पतले थे ॥
भेष उनका न त्यागियों का था, हम शमां जैसा उनका बाना था ।
शक्ल उनकी जलाली देखी थी, आंख उनकी निराली देखी थी ॥
मांथे पर तेज एक दमकता था, जो पहुँचता था बुत ही बनता था ।
मौका मिलते शरण जो में पाया माजरा अपना सारा बतलाया ॥
पहले मुझको सुनाई कुछ सलवात फिर वह बोले थे मुझसे हितकर बात्ता
पूछा सच-सच बताओ तुम मुझसे, ब्रम्ह द्रोही रहे तो तुम कबसे ॥
ब्रम्ह से जिनको बैर होता है, कीर्तन करता स्वांग भरता है ।
भक्ती क्या है महज़ सहारा है, तेरा मन ही तुझे नचाता है ।,
सुन के मुझको हुआ सनाका सा, क्या बताते हैं यन्त्र ये कैसा ।
बात सच्ची यह सारी कहते हैं, क्या यह जोतिष पढ़े नजूमी है ॥
मन यह बोला कि अन्तरयामी है, जिस्म मन रुह के भी स्वामी है ।
शब्द क्या जादू हो गया मुझ पर, जो भी कहते लिख गया दिल पर ॥
सत गुरू वक्त मेंने जान लिया, खुद को मैंने मुरीद मान लिया ।
फिर मुकरर्र गिरा में चरणों में, लब से बोसा लिया मैं कदमों में ॥
सर पर फिर हाथ फेरा सतगुरू ने, मूझको खुद हीउठाया गुरुवर ने ।
बोले ब्रम्हचर्य व्रत तुम रखना, घी कबार बूटी कुछ दिनों खाना ॥
अजया कुछ देर करते तुम रहना, ध्यान सुमिरन बराबर नित करना
पौड़ी-पोड़ी हमेशा तुम चलना, गुरू की मूरति से बात मत करना ॥
जाके कृपक से तुम अभी मिलना, वह बतायेंगे ध्यान का करना

रास्ते में अकेले मत चलना, कुछ दिनों बाद मुझसे फिर मिलना ॥
उनके कहने पर मैं अमल लाया, खुद को सेहत बहाल में पाया ।
सुछ दिनों बाद सुरत टिक पाई, आगे बढ़ते ही शब्द धुन आया ॥
इस तरह जात मुतलके आला, मुझको पहुँचाते मंजिले बाला ।
मैं तो उनका शुक्र बजाता हूँ, जब भी सोचा मैं पास पाता हूँ ॥
जो चलेगा गुरू की कहनी पर, मोक्ष पायेगा अपनी रहने पर ।
"कृष्ण मोहन' दया हुई तुम पर, पीर कामिल फजल करे सब पर ॥

सबको राधास्वामी

बैसाखी का सत्संग

गतांक से आगे

आज बैसाखी है। हजूर परम संत परम दयाल फकीर चन्द्र जी महाराज की भौतिक देह छूट जाने के बाद यह पहली बैसाखी है। हर साल इस अवसर पर वार्षिक सत्संग जीवन काल में सन् १९६२ से लेकर होता रहा है जिसमे अधिकारी सज्जन सम्मिलित होकर अपने पिछले शुभ कर्मों के फलस्वरूप उनके आकर दर्शन करते, वचन सुनते, सतसंग से लाभ उठाते क्यों कि इस संसार में रेडियेशन का नियम काम करता है। जो आत्माएं उनके संम्पर्क में आती थी उनके पिछले कर्भ थे। हजूर परम दयाल जी महाराज स्वयं फरमाया करते थे कि मेरे संम्पर्क में वही लोग आते हैं जिनके आखिरी जन्म हैं। आप सब सज्जन बड़ी-बड़ी दूर से पधारे हैं और क्यों यह उत्सव उनको श्रद्धांजलि अर्पण करने के लिये मनाया जा

रहा है आप सभी अपनी-अपनी श्रद्धा विश्वास के साथ श्रद्धाके फूल भेंट करने के लिए आए हैं — आप धन्य हैं।

मैं सोचता हूँ कि मैं उनको क्या श्रद्धाँजलि भेंट करुँ। कुछ मुख से कहना नहीं पड़ता कोई ऐसे शब्द नहीं मिलते जिससे मैं अपने भाव को पूर्णतया व्यक्त कर सकूँ। उन्होंने मुझे दीन-अधीन और संसार के दुखी प्राणियों के लिए जो काम दिया है उसे प्रकट करना कठिन है। दाता दयाल जी महाराज ने एक शब्द में लिखा है :

किस मुख से तेरी महिमा गाऊँ तू सन्त पुरुष अविनासी है।
चेतन धन अमल विमल निर्मल, सत सदन परम सुखरासी है।
कोई अगुन कहे कोई सगुन कहें कोई निराकार साकार कहे।
तू सब कुछ है और कुछ भी नहीं, धुरपद धुरधाम निवासी है॥
नहीं मन ने थाह कभी पाई, नहीं बुद्धि में आई चतुराई।
चित चिंतन कैसे करे तेरा, तू द्वैत अद्वैत प्रकाशी है।
मन बना बिहंगम मीन मकर मरकट बनकर कूदा अंदर।
चींटी की चाल चला घट में कह उठा तू अगम उदासी है॥
राधास्वामी रुप में प्रकट हुआ दर्शन दे कर कृतार्थ किया।
निज शब्द से अपना भेद दिया, घट अघट का सत्य निवासी है॥

मैंने उनके जीते जी भी कभी उन्हे इन्सान नहीं समझा बल्कि कुल मालिक ही माना। हाँ, इनके प्रकट रुप मैं कुल मालिक का इष्ट बाँधा जो कि शुरु-शुरू में जरूरी होता है। तो आज मैं अपनी जात की तरफ से उनको श्रद्धांजलि भेंट करना चाहता हूँ कि मेरे साथ उन्होंने क्या खेल खेला।

सन् १९३७ के बाद जब मैं हैडमराला जिला स्यालकोट (जो इस वक्त पाकिस्तान में है) काम करता था तो अचानक एक महा-पुरुष मेरे घर में आए। मैंने पूछा महाराज आप कौन हैं और कहां से आए हैं तो उन्होंने निम्नलिखित उत्तर दिया :

संतपुरे से चल कर आया सत कर्तार हैं मेरा नाम।

मैं आया हूं तुझे चिताने सुन लो मुशीरास ।।
तेरा देश है अद्‌भुत अचरज जहां सुबह नहीं शाम ।
कर्म भोग कर सारे अपने पहुँचो जा निज धाम ।।
जग है ताना नहीं घबराना चित दे कर लो काम ।
खूब कमाओ खुशी से खाओ दिन को काम रात विश्राम ।।
जनम मरण से तुम्हें बचाना यह है मेरा काम ।
यह तो काम सहज है भाई चुटकी में सब काम तमाम ।।

तो उन्होंने संकेत में मुझे चिताया कि तुम संसार में निश्चित होकर जीवन गुजारो खूब कमाओ और खाओ। बाकी रहा जन्म मरण से निकलना यह मेरा काम है (चुटकी बजाते हुए कहा कि) मैं इतने में निकाल लूँगा। समय बीतता गया। संत का दिया हुआ संस्कार कभी व्यर्थ नहीं जाता :

संत वचन पलटे नहीं पलट जाय संसार

उनका दिया हुआ यह सस्कार सन् १९६३ में रंग लाया और मुझे मौजाधीन हजूर परम दयाल जी फकीर चन्द्र जी महाराज के चरण कमलों में १९६३ में आना पड़ा। मैं न चाहता हुआ भी घसीटा जा रहा था। जब मैंने पहली बार उनके दर्शन किये तो सतसंग में उन्होंने साफ कहा कि मैं किसी का गुरु नहीं बनता और न ही नाम देता हूं। इसके बावजूद भी मौज ने मुझे विवश किया कि मैं उनकी संगत में रहूँ एक दिन हजूर परम दयाल जी महाराज के सम्मुख में अकेला ही बैठा था तो फरमाने लगे कि तुम पेंशन लेकर कहाँ मंदिर में आ जाओ। मैंने कहा हजूर यदि आप मुझ दीन अधीन को अपने चरण कमलों की छाया में शरण दें तो में मकान भी अपना बना लूँ। और ऐसा ही हुआ। मैं आश्चर्य में था कि मेरे साथ ऐसा क्यों हो रहा है। इनकी शरण में आने का बाह्य रुप में एक कारण मालूम हुआ न ये गुरू बनते हैं,न नाम देते हैं-और न ही मैंने इन दोनों की कभी इच्छा ही की थी और न ही कोई

और सांसारिक कामना अर्थातधन-धान्य सन्तान' मान-प्रतिष्ठ की कोई कमी थी। जब मैं उनकी शरण में आया तो उनके वचन सुने। वो प्रायः कहा करते थे कि मैं संत सत्गुरू वक्त हूँ। मैंने यह मानवता मंदिर भी संसार में नई दुकान खोली है। यदि मैंने वही सौदा जो वर्तमान दूकानें खुली हुई हैं, वही बेचना होता तो मुझे यह नई दुकान खोलने की कोई आबश्यकता नहीं थी। मैं उस वक्त इन बचनों को समझ तो नहीं सकता था मगर चकित होता था।

यह समझने में मुझे काफी समय लग गया कि मुझे मौज हजुर परम दयाल जी महाराज के चरण कमलों में ले आई। और वो तब आई जब सत्संग के वचनों से कुछ थोड़ी-बहुत समझ आई कि मैं कोन हूँ कहां से आयाहूँ, यहाँ कैसे फँस गया। इस ससझ के आने के पश्चात् मुझे उनके चरणों में आने का कारण मालूम हुआ कि मेरी सूरत माया देश में आकर निज देश को भूल गई है और यहां आकर जो उसने अपने आप को समझा हुआ है या बन गई है यानी चादर ओढ़ी हुई है वो मैली हो गई है :

यह चादर कैसे मैली हुई या यह जो कुछ मैं बन गया उस पर प्रकृति के तत्वों की लपेट आकर क्या-क्या कर्म किये हैं। हजूर परम दयाल जी महाराज की संगत में सोचने के लिये विवश होकर तो अपने पिछले जो इस जन्म में अच्छे या बुरे काम किए थे सब दिमाग में आने शुरू हो गये। बचपन मैं जब कि अभी समझ बूझ की शाखें अभी नहीं फूटी थी तो मैंने छठी-सातवीं जमात में एक लड़के की संगत की जो कि छोटी आयु में आचारहीन और चोरी का काम करता था। उसको संगत के फलस्वरूप मैंने दो तीन चोरियां कीं। एक बार पिता जी की जेब से दो-तीन रुपये चुरा लिये एक बार बोर्डिग हाऊस में जिस कमरे में मैं रहता था उसी में एक शान्ति स्वरुप लड़का था उसकी जेब से भी मैंने कुछ पैसे चुराये और एक बार बोर्डिग हाऊस के किचन से कुछ चीजें चुराई

दो बार अनुचित ढ़ँग से अपने ब्रह्मचर्य को नष्ट किया। बोर्डिंग हाऊस में दो बार थोड़े-थोड़े पैसों से जूआ खेला। सन १९२२ में मुसलमान में हिन्दू मुस्लिम दंगे हुये और वहां पर हिन्दुओं पर बहुत मार पड़ी बोर्डिंग हाऊस के जितने लड़के थे सोचने लगे कि हिन्दू कमजोर क्यों हैं। सब ने कहा हिन्दुओं में दया का भाव पाया जाता है क्यों कि ये मांस नहीं खाते तो सबने फैसला किया कि भई मांस खाया जाय। मैंने भी ३०-३५ बार जीवन में मांस खाया कुछ वर्ष सिगरेट भी पीये। शराब पीने से बचा रहा। केवल एक बार एक मित्र ने सोडे की बोतल में मुझे धोखे से शराब का सेवन करा दिया पढ़ने के बाद सारी आयु में पी० डब्ल्यू० डी० बी० एंड आर० में ओवरसियर और सब डिवीजनल आफीसर के रूप में काम करता रहा। आप सब जानते हैं कि यह व्यवसाय कैसा है। बहुत झूठ बोला, हेरा फेरियां कीं जिसकी गिनती करनी कठिन है तो प्रकट रूप में ये काम जो मेंने किये ये भी मैं अपनी चादर के मैला होने का कारण समझता हूँ।

तो जब मुझे विश्वास हो कि मेरी चादर मैली हैतब उस मालिक के कुल सर्वाधार का जो पावन रूप है वो प्रकट हुआ। हजूर दाता दयाल महर्षि शिवव्रतलाल जी महाराज का शब्द है :

मैंपतित ठहरा तभी तू भी पतित पावन बना।
डूबा दुख सागर में मैं तब तू तरन तारन बना ॥

तब मुझे कुछ थोड़ी समझ आई कि प्रकृति मुझे उनके चरण कमलों में क्यों ले आई। क्यों कि मेरी चादर मैली थी। उनकी शिला दो प्रकार की थो। जो लोग दुख सागर में डूबे हुये है उनको तारने के लिये 'शिवसंकल्पमस्तु' की शिक्षा थी और जो लोग पतित हैं, वैसे हम संसार के सभी जीव किसी अवस्था से गिरकर अर्थात पतित हो कर इस हालत में आ गए हैं। दूसरे हम अपने उस घर को भूल केर माया देज्ञ की लपेट में आकर नाना प्रकार के बुरे कर्म

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY PURNADAYAL

करते हैं। वे मेरी तरह महान पतित हो जाते हैं और जब अ भाग्य से सत्संग में जा कर वो थे महसूस करते हैं और पश्चाताप करते है पुकार करते हैं रोते हैं, प्रार्थना करते है तो उनके लिये वो मालिक पतित पावन बनकर आता है। मेरे लिए हजूर परम दयाल जी महाराज पतित पावन बन कर आए। पावन कहते हैं पवित्र को जितनी भी मल जीव की चादर पर पड़ जाती है वो पतित पावन पावन बन कर धो डालते हैं। कैसे ? जैसे गंदे पानी में फिटकिरी डाल दें तो वो गंदा पानी साफ हो जाता है :

जो न होता जग में रावण कैसे आते रामचंद्र।
कंस ने प्रगट किया मथुरा में कृष्ण आनन्द कन्द
जो सुखी है उनको तेरे नाम की चाहत नहीं।
जो भले है उनको तेरे काम की हाजत नहीं॥

इस मालिक का अवतार पापियों के लिये ही होता है या यूँ कहिये कि पाप जब बढ़ जाते हैं और उनको जब कोई सच्चे दिल से धोना चाहता है तो उस वक्त किसी न किसी रूप में वो शक्ति अवतरित हो जाती है और पापों को धोने का काम करती है। जो लोग अभी इस संसार में सुखी हैं यहां की वस्तुओं में आनन्द ले रहे हैं उनका वक्त अभी नहीं आया। क्यों कि उनकी बुद्धि जगत के पदार्थों-धन, मान, गुरुभाई गद्दी में फँसी हुई है। उनके मन में संत के अवतार के अवतार की चाह नहीं :

पाप जब मैंने किया तब तू हुआ परगट यहां।
मैं न करता पाप तुझको जानता कोई कहां॥
पापियों के तारने वाले हमारा ध्यान कर।
करते हैं हव हमसे घृणा हमको पापी जानकर।

यही हाल मेरा हुआ था। सन् १९२८ में सच्चे दिल से पतित पावन से प्रार्थना की बहुत दौड़ा। साधु, संतों महात्माओं को तलाश किया करता था। जब वक्त आया तो वो मालिक, वो शक्ति बाबा सत

करतार जी महाराज के रूप में प्रगट हुई और ढाढ़स दिया।

अच्छे लोगों भागते हो, क्यों हमारे काम से।
कैसे कतरा कर चले हो, क्यों हमारे काम से॥
ज्ञान का अज्ञानियों को ही सदा अधिकार है।
पापियों के ही लिए जग संत का अवतार है॥

हजूर दाता दयाल महर्षि शिवव्रत लाल जी महाराज फरमाया करते थे। कि धोबी के घाट पर मैले कपड़े ही आते है। हजूर बाबा सत करतार जी महाराज का सन् १९३७ का दिया हुआ संस्कार कि मैं चुटकी में जन्म मरण से निकाल लूँगा वही संस्कार सन १९६३ में मुझे ऐसी जगह ले आया जहां वो सच्चा मालिक संत सत्गुरु वक्त के रूप में आयाहुआ था और चुटकी में ही पापियों को जन्म मरण से निकाल सकत्ता था।

सुख के सिर पत्थर पडे सब ने भुलाया नाम को।
दुख की बलिहारी है, दूख ने जपाया नाम को॥
मेरे दाता दीन और दुखियों की ही तुझको लाज है।
दीन बन्धु दीन हित करना ही तेरा काज है॥

दाता दयाल जी महाराज उस अवस्था को, जब कि जीव अपने पतितपने को सच्चे दिल से महसूस करके कोई चारा न पाकर दीन और हीन वन जाता है – उसको दर्शा रहे हैं। इसको वही जान सकता है जिसके साथ यह बीती हो।

अपनी निंदा क्या करें निंदाके कब हम पात्र है।
सच्चे अधिकारी दया के जग के पापी मात्र हैं॥
पाप ही दरशन दिलाते हैं, तेरे संसार को।
पाप करके वह सुझा देते हैं, भक्ति सार को॥

जब यह अवस्था आ जाती है तो उस वक्त उसे इस संसार की लाज शर्म नही रहती और वो सारे पाप खोल देता है। यह नहीं सोचता कि मुझे संसारी लोग क्या कहेंगे। उसकी एक ही लगन रह

जाती है और वह है मालिक की दया।

द्वंद्व में हम को फँसाया और पापी कर दिया।
मन का बरतन वासनाओं से हमारा भर दिया॥
सारे पापी तर गए आई अब बारी मेरी
देखता हूँ राह व्याकुल से आने की तेरी

हमें पाप में कौन फँसाता है। वासना! हजूर परम दयाल जी महाराज उस शक्ति को जालिम कहा करते थे जिसने हमारे अंतर में वासनाएँ भर दी हैं। वासनाओं की पूर्ति के लिये हमारी मनोवृत्तियां अज्ञानतया पाप-पुण्य दोनों में प्रवृत्त हो जाती है— यही द्वंद्व है। इस हालत में वो पापी यह समझता है कि पापी इस संसार सागर से तर सकते हैं और अपने-आप को वो तैरने का अधिकारी समझने लग जाता है और समझता है कि पिछले पापी तर गए अब मेरी बारी जरूर आएगा। इस विचार पर उसकी बृत्ति टिक जाती है तब पतित पावन प्रकट होते हैं।

तर गए गनिका अजामिल मुक्त शबरी भीलनी।
तर गए सैना सदन तक और सुपच चंडाल भी॥
मेरी बारी पर बता अब देर क्यों करने लगा।
इस अधम को तार दे ये दुख से अब मरने लगा॥

हजूर दाता दयाल महर्षि शिवब्रत लाल जी महाराज ने, जो बड़े-बड़े पापी जाति और कर्म के हीन थे, उनका संकेत किया है मगर आप इन सब के जीवन कथायें पढ़े, भक्तमाल पढ़े उपनिषदें, पुराण पढ़ें इतिहास नहीं बताता कि मेरे जैसा अधम पहले किसी गुरु के पल्ले पड़ा हो।

ऐ पतितपावन पतित की ओर दृष्टि हो तेरी
ऐ तरन तारन नहीं होती है चिंता क्यों मेरी॥
राधास्वामी अब दया से मेरा बेड़ा पार कर।
दुख सहा करता हूँ निस दिन आपके ...

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

मैंने भी इस प्रकार की प्रार्थनाएँ उस राधास्वामी दयाल से की थी आरतियां उतारीं थीं जो हजूर परम दयाल फकीर चन्द्र जी महाराज के रूप में आये हुये थे। तो मैं आपकी सेवा में रख रहा हूँ कि जब मेरी चादर मैली हुई तो फिर मेरे साथ क्या हुआ।

मेरी चादर मैली होय गई।
आई थी संग मेरे घर से।
देश बेगाने सोय गई ॥

मैल भरो मैल सँग राँची।
रूप अनूप का खोय गई ॥

यह चादर जब यहां माया देश में यहां के पदार्थों में फँस गई और मन की दुनियाँ में वासनाओं के अधीन काम करने लगी तो अपने असली रूप को जहां से वो चली थी भूल गई।

साबुन पानी काम न आवे।
पापन संग मन मोह गई ॥

तो मैं धर्म, कर्म तीर्थव्रत, योग, भक्ति, ज्ञान बहुत कुछ करता रहा मगर मल नहीं जाती थी। न ही इसके दूर करने का उपाय सूझता था। बहुत दौड़ा और पुस्तकों में लिखे हुए या और साधु महात्माओं और गुरूओं के बताये हुए मार्ग पर चलता रहा। मगर कोई लाभ न हुआ। यह इस कड़ी का अर्थ है।

घोर मैल से कब यह छूटी,
जब परम दयाल की होय गई।

तो वो मेरी चादर की मल उस वक्त साफ होने लगी जब कि मैंने अपने आप को पूर्णरूपेण हजूर परम दयाल जी महाराज के चरण कमलों में अर्पण कर दिया या शरणागत हुआ।

फकीर नामाणा हँस के ओढ़े,
मैल की दुनियां रोय गई।

[illegible] बिल्कुल साफ होईग

सज्जनों ! जब तक यह शरीर और मन साथ है यह कर कठिन है। मैं किस बाग की मूली हूँ। बड़े-बड़े संत भी इस बात का दावा नहीं कर सकते :

संत तब लग भय करें जब लग जिजर साथ।

अब मैं महसूस करता हूँ कि मौजाधीन चादर बन गई थी। यहां आकर मैली हुई। हजूर परम दयाल जी महाराज ने दया कर दी आगे भी वो जाने और उनका काम जाने। मैंने तो उनके अर्पण कर दी थी। अब इसकी लाज उनको है। यह समझ कर अब मैं जैसे गुजरती है जिन्दगी वैसे गुजरता हूँ। जिन माया के पदार्थों में चादर आ कर फँसी हुई थी चाहे वो स्थूल, सूक्ष्म, कारण हों यह सब मैल की दुनियां थी। इनके पंजे से छूटने का विश्वास हो गया आगे मालिक जाने।

तो मैं इस बैसाखी पर हजूर परम दयाल जी महाराज को श्रद्धांजलि भेंट कर रहा हूँ। क्या कहना चाहता हूं कि देखो संसार के लोगों मेरे जैसा अधम चेला आज तक किसी गुरु को नहीं मिला। इतिहास सिद्ध करता है। और उन्होंने क्या खेल खेला और कहा वो भी इतिहास में नहीं मिलता। आज तक बड़े-बड़े महापुरुष आए उन्होंने अपने चेलों के विषय में बहुत कुछ कहा उनकी सराहना की किसी ने कहा कि मेरा शिष्य जन्म सिद्ध है, किसी ने कहा क्या पता मैं गुरु हूँ या मेरा शिष्य गुरु है किसी ने कहा यह शिष्य तुझे तारने के लिये आया है। सत् कबीर जैसे महापुरूष ने भी लिखा है :

गुरु पारस में अन्तरो, जानत संत सुजान।
यह लोहा कंचन करे गुरु कर लें आप समान ॥

इस शब्द के अनुसार यह तो पता लगता है कि गुरु अपने समान कर लेता है मगर इतिहास नहीं बताता कि किसी गुरु ने ये कहा हो कि यह शिष्य मुझसे आगे है। इसकी रहनी मेरी रहनी से हजार

अब आप ही अनुमान लगायें कि जिस गुरू को अपनी गरू आई गद्दी मान, प्रतिष्ठा संसार के यश की जरुरत हो क्या वो ऐसा कह सकता है ?

तो हजूर गुरू या सद्गुरू न बनते हुए भी गुरू और सदगुरु का वो काम कर गए जिसका उदाहरण आज नक नहीं मिलता। तो सिद्व हुआ कि मेरे जैसा अधम चेला होना और उनकी तरह पतितपावन बन कर निराला खेल खेलना इतिहास में कहीं नहीं आया। यह श्रद्धाजलि है जो मैं अपनी तरफ से भेंट कर रहा हूँ।

भगत
३५८/१५-ए चंडीगढ़

जून के गतांक सेआगे

दिखावा और प्रदर्शनी की मृग-तृष्णा

संसार दिखावे की चेष्टा रखता है। प्रत्येक मनुष्य को प्रदर्शिनी प्रिय है। मनुष्य चाहता है कि संसार उसको धन सम्पत्ति मान बड़ाई और प्रतिष्ठा को देखे और उसके दिखाने के वह नये-नये ढंग सोचता है। उसकी प्रसन्नता इस दिखलावे में रहती हैं परन्तु इस दिखलावे से वास्तविक आनन्द नहीं प्राप्त होता और अत्यन्त बन्धन का कारण हो जाता है। मान प्रतिष्ठा के अभिलाषी की आंख फोड़ दी जाती है और वह बुरी भांति काल का प्राप्त होता है।

खेद ! यदि यह दिखलावे का व्यवहार न होता तो जीवन के उद्देश्य की प्राप्ति में इस प्रकार कठिनाइयां न प्रतीत होतीं और न मनुष्य मनुष्यत्व से पतित होता।

एक मनुष्य दान इसलिए नहीं करता कि वह धार्मिक कर्तव्य है किन्तु वह उसके द्वारा अपनी बृद्धि चाहता है। वह इसके कारण

प्रतिष्ठित हो जाता है अब यदि इसको दुख होगा तो वह कहे कि हाय मैं तो पुण्य करता हूं ईश्वर मुझे दुख देता है। इब मूर्ख को ज्ञान होना चाहिये कि तूने पुण्य कब किया था। यह कहेगा देखो मैंने धर्मशाले बनवाये, कुये खुदवाये, सदावर्त जारी किया और तुम कहते हो पुण्य कब किया था। मैं इसको उत्तर दूँगा मित्र! तुम ने यह सब काम किये थे अवश्य, परन्तु मान सम्मान की इच्छा से किये थे तुमको उसका फल मिल गया। जो इच्छा थी पूर्ण हुई। अब उस सिलसिले में शिकायत क्या करते हो! तुम्हारे कर्म का फल सीमा वद्ध है प्राप्त हो गया। इससे अधिक अब उससे क्या आशा रखते हो! तुमको जो दुःख सुख मिलते हैं वह दूसरे कर्मों के फल हैं क्यों कि इन पुण्यों का फल तुमको प्राप्त हो गया। वह किसी कर्म हैं। पुण्य वास्तव में वह है जो स्वार्थ से खाली हो। निष्काम पुन्य कर्म हो। एक हाथ दान दे दूसरा न जानने पावे, तब तो वह पुन्य है नहीं तो वह भी संसार का साधारण कर्म है। इसकी बड़ाई और महिमा के गीत क्या गाया करते हो। मूर्ख इसकी प्रशंसा किया करें हम तो इसका तनिक भी महत्व नहीं समझते।

सारांश धर्म कर्म प्रत्येक स्थान पर दिखावे का है। जो जीवित माता पिता को तो चाहे भोजन भी न दें परन्तु उनके वर्षो और श्राद्ध के दिन हजारों खर्च करते रहते हैं। इसको तुम पुण्य कहोगे यह पुण्य नहीं किन्तु एक प्रकार का व्यवहार है।

यदि यह व्यवहार एक अवस्था तक परिमित रहे तो कुछ आपत्ति नहीं परन्तु कठिनाई तो यह है कि यह जहां भूत के समान गरदन पर सवार हुआ फिर दिन प्रति दिन उसका सिलसिला बढ़ता ही जाता है। आज एक प्रकार की वृद्धि है कल दूसरे प्रकार की आज यह नाम किया, कल वह नाम हुआ। संतुष्टि नहीं होती और मरूस्थल के हिरण के सदृश्य इसकी चेष्टा बढ़ती ही जाती है अंत

यह न समझो कि यह दिखलावा केवल संसारी अथवा माध्यमिक मनुष्यों में होता है। बुद्धिमान अपनी बुद्धमत्ता को बृद्धि का साधन बनाते हैं। लेखक अपनी रचनाओं से प्रतिष्ठा प्राप्त करने की चिन्ता में रहते हैं। भक्त भक्ति का चमत्कार दिखलाता है। ज्ञानी ज्ञान की कथाएं इस ढ़ंग से कहता है कि मनुष्य मोहित हो। उसका दरबार खूब लगे और दूर-दूर के मनुष्य उसके दर्शन को आवें। मेरी समझ में ऐसे बुद्धिमान को बुद्धिमान, ऐसे लेखक को भक्त को भक्त, ऐसे ज्ञानी को ज्ञानी, कहना ही भूल है। न उसने विद्या के रूप उद्देश्य को समझा, न उसने रचना के मन्तव्य को जाना, न भक्त ने भक्ति के परिणाम को समझा न ज्ञानी ने ज्ञान के स्वरूप को पहिचाना। यह सब मृग,तृष्णा के प्यासे बने और उसके पीछे जान दे दी। क्या उद्देश्य था और यह किस ओर बहक गये। यह दिखावा प्रायः सब में है और सब के काम में है और यही कारण है कि यह सब के गले की जंजीर बना हुआ है।

हाय यह दिखावा ही माया है। जिसने सब को भ्रम में फँसा लिया है और कोई सार तत्व की ओर नहीं जाता। बात बात में फँसा हुआ है। कबीर साहब का कथन है :—

और भूलेषट दर्शन भाई। पाखण्ड भेष रहा लपटाई॥
जैनी धर्म कर्म नहीं जाना। पाती तो देव घर आना॥

अर्थ व्याख्या:— किस किस को कहें। छः दर्शन वाजों ने भटक कर पाखण्ड का भेष धारण किया। उनको यह पता ही नहीं कि दर्शन का उद्देश्य क्या है। उन्होंने उनके शास्त्रार्थ और छल कपट द्वारा दिखावटी (प्रतिष्ठा) प्राप्त करना चाहा। इसी भांति जैनी ने अहिंसा का जो परम धर्म है, उसकी समझ नहो प्राप्त की : वृक्ष के पत्ते तोड़कर देवता को पूजता है। उससे कोई पूछे तो सही क्या पत्ता तोड़ने से हिंसा नहीं होती। दर्शन इसलिये पढ़े जाते हैं कि लोग दर्शन के ज्ञाता सिद्ध हों। जैनी धर्म कर्म इसलिये करता है कि वह

धार्मिक और अहिंसक बताया जाय और लोग उसका सम्मान क

सारांश यह कि दिखावा जीवन के संपूर्ण विभागों में अपना घातक विष फैलाया करता है और जिसने भूल कर इसको जीवन का उद्देश्य समझ लिया उसकी अवस्था पर सिवाय शोक के और क्या कहा जाय।

शाहजहां बादशाह का वृत्तान्त

शाहजहां बादशाह स्वभाव का अच्छा था। इस में संदेह नहीं कि वह रक्त पर पांव जमाता हुआ राज सिंहासन पर बैठा था। फिर भी किसी अंश तक क्षमा करने जाने योग्य है। इसका नाम शाहजहाँ खुर्रम था। शाहजहाँ पदवी थी। पूरा नाम था शाहउद्दीन शाहजहां। कुरान में निपुण था। प्रजा अकबर और जहाँगीर के समय से सुखी और प्रसन्न थी इसलिए इसके समय में बहुत कुछ शान्ति थी। इसलिये इसको भोग विलास की बहुत सूझने लगी और उसने राज्य की विशालता और शोभा की ओर विशेष ध्यान दिया

महलों अथवा इमारतों का बड़ा प्रेमी था। महलों की सुन्दरता की निरख परख में वह न केवल अपने समय का अद्वितीय था किन्तु इस समय तक उसके बनवाये हुये महल या इमारतें अद्वितीय समझी जाती हैं।

बादशाह की सवारी जब कभी निकलती थी बड़े ही धूम धाम से निकलती थी। उत्सव का प्रबन्ध कुछ इस प्रकार से किया जाता था कि जमशेद और फरीदूं के विचार क्या स्वप्न में भी आने की संभावना नहीं थी। प्रत्येक बात अपने ढंग की विचित्र! जो काम किया उसी में कमाल दिखलाया। इससे अधिक प्रदर्शिनी और सजावट का सामान संसार के किसी बादशाह के यहां अब तक नहीं है। दल बादल का शामियाना (तंबू) सहाना मण्डल का खेमा (पाल) वर्षों में जाकर पूर्ण हुआ था। जब यह मैदान में खड़े किये जाते थे

जादू का दृश्य आंखों के सामने आ जाता था। चाँदी सोने के खंभे, जिनके प्रत्येक ओर सोने चाँदी की चोजें उन पर विचित्र मीना कारी का काम किया हुआ।

महलों की ओर दृष्टि डालिये तोमानो स्वप्नावस्थाकादृश्य दृष्टि गोचर होताथा। संसार में उनकी उपमा कहीं नहीं मिलेगी। सहस्त्रों महल बने और बनाये जा रहे हैं परन्तु शाहजहाँ की बात शाहजहां के साथ गई। उसकी बराबरी कौन कर सकता है!

तख्त ताऊस, विचित्र और विलक्षण वस्तु थी। उसकी लागत सात करोड़ रूपया बतायी जाती है इस युग में तो वह दस कराड़ में भी नही बन सकेगा। जिस समय बादशाह उस पर जम कर बैठता था राजा इन्द्र की सभा का दृश्य खिच जाता था। मोरों के पंख कुछ इस भांति बने थे मानों वह नाच रहे हैं! चोंच जड़ाऊ और उससे सुन्दर मोतियों की माला लटकती हुई दरबार में राजा महाराजा, मंत्री, सेना पति के उचित स्थान का ऐसा उत्तम प्रबन्ध था कि जिसकी कोई गणना ही नहीं। प्रत्येक बात से बुद्धिमत्ता, सुसज्जिता- सुन्दरता, योग्यता प्रगट होती थी। सिपाही सुनहरी बरदियां पहने हुये उचित स्थान पर खड़े हुये मत्रीगण बादशाह के दांये बांये नम्र भाव से मस्तक झुकाये हुये आज्ञा की प्रमीक्षा में उद्यत! क्या मजाल कि कोई चूँ तो करे। इसका दरबार क्या होता था, मानों एक चित्र था।

राजमहलों व भवनों में दिल्ली का लाल पत्थर का किला- मोती मसजिद, ताजमहल, एतमादुदौला सब इसकी स्मृति हैं और सब एक से एक उत्तम हैं। ताज महल का रासा संसार की अद्वितीय इमारत हैं। वह संसार के विचित्र प्रदर्शनियों में एक समझा जाता है और ऐसे ढंग से बनाया गया है कि दृष्टि पड़ते ही चका चोंध हो जाती है और परमेश्वर की कारीगरी का स्मरण होने लगता है।

प्रकार की प्रदर्शनियों व दिखावे के काम में व्यतीत किया। इसम सन्देह नहीं कि भवनों (इमारतों) की दृष्टि से वह भारत को प्रदर्शनी शाला बना गया परन्तु विशेषत: उसके जीवन पर इन सबका क्या प्रभाव पड़ा !

मुमताज महल इसकी चाहती स्त्री आसफ शाह की पुत्री थी। चारों पुत्र दारा, शुजा, मुराद, औरंगजेब उसी के गर्भ से थे। जब यह प्रसव पीड़ा के कारण कालग्रसित हुई, बादशाह से कहा मेरे पश्चात विवाह न करना, नहीं तो सन्तान में विरोध उत्पन्न होगा और मेरी समाधि(मकबरा)विचित्र और अनुपम बनवाना। बादशाह ने उसके उपदेश को ग्रहण किया परन्तु मुमताज का मरना था कि उसका जीवन अंधकारमयहो गया। पहिले की सारी चहल पहल विदा हो गई। इस प्रकार शोक हुआ कि सिर के बाल उजज्ल हो गये।

जब यह बीमार पड़ा पुत्रों में विद्रोह मच गया। औरंगजेब इन सबमें चतुर था। जोड़ तोड़ करके पिता को वंदीग्रह में डाल दिया। कोई इसके पास आ जा नही सकता था। बन्दीग्रह मे उसका जीवन मृत्यु से भी अधिक दु:खदायी था। पुत्रों के हाथ से शाहजहां के अतिरिक्त इस प्रकार विपत्ति और अपमान कदाचित किसी और ने काहे को सहन किया होगा और संसार में औरंगजेब की तरह किसी पुत्र ने कदाचित ही अपने पिता के साथ ऐसा दुर्व्यवहार किया होगा।

शाहजहाँ ने दिखावे और प्रदर्शनीय बातों की ओर अधिक ध्यान दिया था। अंतिम समय में उसने औरंगजेब से ताज महल के एक दृष्टि भर देख लेने की प्रार्थना की। यह कब मानने वाला था परन्तु कहने सुनने से बाहर तो जाने नही दिया, बंदी ग्रह ही से ताज महल के देखनें की आज्ञा दी। शाहजहाँ ने उसको शोक और निराशा से देखा। यही भवन उसके जीवन उद्देश्य का आधार था। हृदय में बहुत कुछ शोक किया और विलख विलख कर इस संसार से प्राण

त्याग किये । लोग कहते हैं कि ताजमहल का दृश्य देखने के पश्चात औरंगजेब ने बादशाह की आंखों में सलई फिरवाकर अँधा करा दियाथा । कौन जाने यह सत्य है अथवा असत्य है, क्यों कि किंवद-दंतियों से ही केवल पता लगता है । चाहे जो कुछ हो शाहजहां के जीवन का परिणाम अत्यन्त भयानक था । और उसके प्राणों की रक्षा न हो सकी ।

—×—

फैशन की मृगतृष्णा

नवयुवकों में विशेषत: फैशन का अधिक प्रचार होता है । वह समझते है कि इनके अनुकरण में सुख चैन है, परन्तु यह भूल है ।

प्राचीन समय के ऋषी जानते थे कि यह स्वभाव मनुष्य को अंहकार और अभिमान के कूप में गिराने वाला है । अतएव उन्होंने इस प्रकार का प्रबंध कर रक्खा था कि उसकी जड़ ही न रहने पावे जहां बालक ५-७ वर्ष का हुआ वह गुरु की सेवा में जाकर तप और ब्रह्मचर्य का जीवन व्यतीत करने लग जाता था । और चूँकि सबका नियम आचार एक प्रकार का होता था, उनमें शौकीनी और चाव व चेष्टा के प्रदर्शनीय अवस्था की फुरना, तकल्लुफ का विचार तक भी नहीं उत्पन्न होने पाता था । मनुष्य सदैव अपने साथियों को देख कर उसी ढ़ंग पर चलने और उनका जैसी अवस्था का प्रेमी होता है । जहां किंचित भी इसका विचार न हो न उदर पूर्ति के साधन की ओर ध्यान जाने पावे और न कोई वस्तु, सामग्री पर्य्याप्त हों वहां कोई किस प्रकार इनके बन्धन में आ सकता है । यह समय फैशन का है । यदि किसी के पास अच्छे कपड़े न हों तो वह लज्जा के मारे बाहर नहीं निकलता और जैसे पहनावे की प्रथा चल जाती है, सब उसी को अच्छा समझते है । सभ्यता का उद्देश्य ही यह मान

णाम होता है कि फैशन का भूत उसको विवश कर देता है। गाढ़ी कमाई कपड़े लत्ते और दिखावे की सामग्री के भेंट हो जाती है। दिन में ५–५ बार बल्कि दस दस बार कपड़ों के बदलने की आवश्यकता प्रतीत होती है। माना ! यह युग प्राचीन युग के अनुसार पालने योग्य नहीं रहा और न उस समय को सुगमता के साथ लौटा ही सकते हैं। बिना उत्तम वस्त्र के सरकार दरबार तक में जाने का अवसर नहीं मिलता। भलमंसी की पहिचान केवल उत्तम वस्त्रों तक परिमित रह गई। वह सब सत्य है और इसके होते हुए भी मनुष्य इस बात में विवश है कि वह वर्त्तमानकाल के अनुसार चले फिर भी यह सम्भव है कि मनुष्य अपने ढंग को साधारण रक्खे। कपड़े साफ सुथरे और भली भांति सिले हों। यह आवश्यक नहीं कि वह बहुमूल्य हो हों और यों ही फैशन के कांट छांट के अनुसार हों। संसार में फ्रान्स एक ऐसा देश है जहां नित नये नये फैशन की वस्तुयें आविष्कृत होती रहती है। योरूप व अमेरिका के निवासी इसके अनुकरण में अग्रसर रहते हैं। परिणाम यह होता है कि संपत्ति की अधिकांश मात्रा इसी प्रकार व्यर्थ में नष्ट हो जाती है। सुख तो प्राप्त नहीं होता, किन्तु चित्त की वृत्ति इस प्रकार की हो जाती है कि प्रत्येक समय दूसरों के आक्षेप की चिन्ता लगी रहती है। चिन्ता में दुख है और इस लिये फैशन और दिखावे के जगत वासियों को कठिनाई से ही सुख प्राप्त होता है। जहां वह किसी समाज में गये, सब से पहिले उनकी दृष्टि वस्त्र पहनावा, रहन सहन के व्यवहार और आचार विचार ही की ओर जाती है। यदि मनुष्य तनिक भी इस ओर ध्यान देता है और उसके छल कपट को देख लेता है तो फिर भूल कर भी उस ओर ध्यान नही देता परन्तु शोक यह है कि बहुत कम मनुष्य मिलेंगे जो उसके ऊपर विचार करते होंगे नहीं तो नवयुवकों की बड़ी संख्या अपने जीवन को इस अपवित्र विष से नष्ट कर लेती है। उत्तम समाज और महान पुरुषों का नाम उस

मण्डली को दिया जाता है, जो नई से नई कांट छांट पर मोहित हों और वहां उनके बीच रहकर मनुष्यों में जो जो त्रुटियां आ जाती हैं। वह वर्णन से बाहर हैं। लोग ऐसे मनुष्यों से मिलते हैं जो उनकी सम्पत्ति का महत्व समझते हों उनका अनुकरण करते हों परन्तु उसका पुरुस्कार क्या मिलता है। जब कभी अवसर मिलता है गंवार मूर्ख देहाती और उजड़ कहे जाते हैं। यह मनुष्य की बड़ी भूल है जहां अपना अपमान हो, भूलकर भी न जाना चाहिये और न अपने आप को इस फैशन पर अर्पित करन चाहिये।

जयपुर के राजा के यहां बूंदी की राजकुमारी ब्याह कर आई। उसका पहनावा राजा की रुचि अनुसार नहीं था। जब अधिक हेल मेल हो गया वह बहुधा बूँदी वालों के रहन सहन वेष-भूषा पर हँसी मखोल करके बौछार करने लगा। रानी बेचारी सहन करती गई। एक दिन राजा ने हाथ में कैंची ली। कहने लगा कि लाओ मैं तुम्हारे पहिनावे की कांट छांट करके ठीक कर दूं। रानी उसी समय म्यान से तलवार निकाल कर कहने लग गई 'खबरदार! तुम में स्वाभिमान नहीं हैं। तुमने कैंची मेरे वस्त्रों में लगाई नहीं कि मैं तलवार कलेजे में भोंक दूंगी। तुमने मुगलों के दरबार के ढंग का अनुकरण किया है। तुम चाहे इसको किया करो। बूँदी के राज भवन के पहिनावे की शोभा और ही कुछ है। वह मुगल दरबार के पहिनावे का अनुकरण नहीं कर सकते! तुम्हारा क्या अधिकार है कि तुम व्यर्थ किसी के भेष-भूषा पर हस्तक्षेप करो और फबतियां उड़ाया। प्रत्येक मनुष्य को अधिकार हैं कि वह जिस भाँति चाहे वस्त्र पहने आज से मैं वसीयत कर जाऊँगी कि बूँदी की कन्यावें कभी तुम्हारे वंश में नही ब्याही जांय। और ऐसा ही हुआ। राजा दंग रह गया।

प्रत्येक मनुष्य, प्रत्येक जाति और प्रत्येक देश के रहन-सहन, वेष-भूषा प्रथक हैं। यथाशक्ति उसको साधारण रखने का प्रयत्न करना चाहिये, न कि दूसरों के ढ़ंग का निष्प्रियोजन अनुकरण ही

किया जाय। आज कल हमारे देश में कई प्रकार के फैशन हैं और सारा देश आधा तीतर आधा बटेर बना हुआ है। कोई कोट पतलून पहनता है कोई अचकन पहनता है, किसी को कुर्ता धोती की रूचि है। एक ही देश एक हो जाति और विभिन्नता ! मैं ने बहुधा नवयुवकों को कहते हुये सुना है कि कोट पतलून के पहनने से रेलगड़ी की यात्रा के समय रेलवे कर्मचारी डर जाते हैं और उनको दुराचार करने का साहस नहीं होता। यहीं बात किसी अंश तक सत्य भी है, परन्तु इन नवयुवकों का हृदय किस प्रकार अपवित्र और संकीर्ण हो गया है, जो किंचित लाभ की सुगमता के कारण अपनी जातीयता और वेष-भूषा का अपमान करते कराते हैं। अस्तु इन से क्या आशा की जा सकती है ! मान व प्रतिष्ठा फैशन पर नहीं है यह कोई वस्तु ही और है। हमको भूल कर भी इसके मृग तृष्णा में न फँसना चाहिये।

जो फैशन और सजावट (तकल्लुफ) का प्रेमी होता है उसका परिणाम अच्छा नहीं होता।

अब्दुल हसन ताना शाह का वृतान्त

अब्दुल हसन ताना शाह हैदराबाद गोल कुण्डे का बादशाह था। यह बड़ा सुशील व सभ्य पुरुष था। इसमें गुण अधिकांश थे। यदि अवगुण था तो यह था कि उसका स्वभाव अत्यन्त सूक्ष्मदर्शी व विशाल था। और इसी को वह सब कुछ समझ कर इसी में सुख चैन व आनन्द की खोज करने लगा। सिद्धान्त को बात है कि मनुष्य जिस ओर ध्यान देता है उसी ओर वह कुछ न कुछ विचित्र व विलक्षण चमत्कार दिखलाता है। तानाशाह सौन्दर्य उपासक और फैशन का प्रेमी था। गाने बजाने में निपुण था। यहां तक कि यदि उसको उस कला में अद्वितीय कहा जाय तो मिथ्या न होगा। उसके दरबारी, सब उत्तम वस्त्रधारी व उत्तम वेश-भूषा वाले थे। बादशाह को इस

[illegible] का विशेष ध्यान रहता था । इसके साथ ही वह ऐसी नवीन नवीन सामग्रियों का आष्विकार करता था जिससे इसको और भी शान्ति मिला करती थी ।

एक बार की घटना है कि औरंगजेब ने उसके स्वभाव और रूचि को जान उसको बहुमूल्य और उत्तम इत्र भेजा । राजदूत स्वयं उसको लेकर तानाशाह के पास गया और बड़े आदर पूर्वक भेंट किया चूँकि दिल्ली का बादशाह संपूर्ण भारत का सम्राट समझा जाता था । तानाशाह ने उसके भेंट को बड़े सम्मान से हाथ में लिया । परन्तु जिस समय सूँघने के विचार से उसको नाक के पास ले गया मन बड़ा मलीन हो गया । दुर्गन्ध को सहन न कर सका और उसके मुंह से निकल गया कि इसमें घोड़े की दुर्गन्ध आती है । दिल्ली के दूत को इस बात का बड़ा दुख हुआ । उसने औरंगजेब को लिख भेजा कि आपके भेंट के साथ इस प्रकार दुर्व्यवहार किया गया । औरंगजेब को अत्यन्त आश्चर्य हुआ । जांच की गई कि यह इत्र कहाँ का बना हुआ है । जिस व्यापारी ने उसको बेचा था वह बुलाया गया । उसने जॉच करने के पश्चात कह दिया कि यह वह इत्र है जो तानाशाह के अस्तबल के घोड़ों को मला जाता था और अस्तबल ही से दरोगा ने लाकर मेरे हाथ बेचा था ।

इस बात को सुनाता था कि औरंगजेब तानाशाह के सम्बन्ध में नाना प्रकार के विचार मन में सोचने लगा । उसने समझा कि जो मनुष्य इस प्रकार का मस्तिष्क रखता है वह इसके अतिरिक्त कि रात दिन भोग विलास में जीवन व्यतीत करे और कुछ न करता होगा और ऐसे मनुष्य पर विजय पा जाना सुगम है । यह औरंगजेब की भूल थी । तानाशाह इसमें सन्देह नहीं कि अत्यन्त सूक्ष्मदर्शी था परन्तु शूर वीर और साहसी भी था । फिर भी बादशाह ने नहीं माना और उसको विजय करने की प्रतिज्ञा कर ही ली ओर स्वय [illegible] गया । तानाशाह के सैंनिक बडी वीरता से लडे । बादशाह

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

की अनेकों दार परास्त हुई, परन्तु, उसने बार बार ताना: संधि कर लेने की आग्रह पर भी संधि नहीं की क्यों कि वह समझता था कि यह तानाशाह की निर्बलता है और वह इस कारण अवश्य परास्त होगा।

संक्षेपतः—क्रमशः युद्ध होता रहा। अन्त में तानाआह परास्त हुआ क्षौर लिल्ली वाले उसको पकड़ कर ले गये। सेना के सेनारति ने पूछा— सरकार तानाशाह के विषय में क्या आज्ञा होती है? वह वह बन्दीग्रह में रक्खा जाय या कत्ल कर दिया जाय। औरंगजेब ने कुछ समय तक विचार किया। फिर कहने लगा इसको दौलताबाद के किले में ले जाकर कैद में रक्खो और एक दिन किसी स्थान पर खड़ा करके उसके दोनों ओर से गंवारे और मैले कुकेले कपडे पहिने हुई देहाती स्त्रियों को निकाल दो यही उसका दण्ड है। सेनपति ने अक्षरशः इस आज्ञा का पालन किया। जिस समय मंवार मैंली कुचेली स्त्रियां उसके पास से निकली वह उनकी दुर्गन्ध और कुढ़ग पन को सहन न कर सका और उसी समय देखते देखते भूमि पर पड़ा और मर गया।

मनुष्य संसार में किसी विशेष उद्देश्य के लिये आया है। कितने दुख की बात है कि वह अपना जीवन बनाव श्रृंगार के पीछे नष्ट करे और यह न सोचे कि मैं इसके अतिरिक्त और भी किसी कार्य अथवा कर्म के लिये निर्दिष्ट हुआ हूँ।

———

छटवां दृश्य

शासन की मृगतृष्णा

शासन से उत्तम क्या वस्तु है? अधिकार से अधिक मिठास किसमें है? दस बीस सौ पचास मनुष्य अपने अधिकार में हों, उन पर दबाव रहे, वह संकेत पर काम करते हों, इससे बढ़कर और क्या बात हो सकती है!

शाहजहां बादशाह को उसके बेटे औरंगजेब ने कैद कर लिया और कैद भी इस निर्दयता के साथ कि ईश्वर शत्रु को भी न दिखावे। पूछा गया कि आपको एक नाज खाने को और एक काम मन बहलाने को दिया जायगा। सोच लीजिये जो स्वीकार हो वैसा प्रबन्ध किया जाय। शाहजहां ने सोचने के पश्चात उत्तर दिया—'खाने के लिये चने और पढ़ाने के लिये विद्यार्थी मिलें' औरंगजेब हँसा। क्यों न हो चना कुल नाजों का बादशाह है। उससे छप्पन प्रकार के भोजन बनते हैं। अब तक सुस्वादिष्टता का विचार बना हुआ है और अब तक शासन की गन्ध भी नहीं गई और नहीं तो लड़कों पर ही शासन सही। शोक कि वह अपने अभागी पिता के लिये यह काम भी नहीं कर सका।

यह शासन मनुष्य के हृदय में इस प्रकार का पागलपन उत्पन्न कर देता है जैसा हम पतिंगों में देखते हैं। मनुष्य उसके लिये जल मरते हैं फिर भी तृष्णा का त्याग नहीं करते। राजा रानी तो शासन के वशीभूत ही हैं, उनका तो कहना ही क्या है परन्तु जिनको थोड़े थोड़े अधिकार भी मिले हुये हैं वह उसी को सब कुछ जान रहे हैं और उन पर मुग्ध हैं। एक मनुष्य पुलिस में दस रुपया का नौकर है, समझता है मैं बहुतों पर अधिकार रखता हूँ और यह भाव उसको नष्ट कर देता है और जब उसको नौकरी छीन ली जाती है, तब उसकी नानी मर जाती है, "उतरा शहना मरदक नाम।" बच्चा बहुत उत्पात मचाते थे, अब तनिक देखिये क्या दशा है!

शहरों की म्यूनिसपलटी की मेम्बरी में भी यही अधिकार के प्यार का दृश्य दृष्टिगोचर होता है। मेम्बर क्या हो गये, राजा बन गये। झूठी सच्ची बातें बनाने लगे। एक बार यह प्रश्न किया गया कि क्या कारण है कि मेम्बरी के लिये इतनी लड़ाइयां होती रहती हैं, सिर टूटते हैं, उचित अनुचित व्यवहार किये जाते हैं? उत्तर मिला—कुछ थोड़ा बहुत अधिकार प्राप्त हो जाता है, दबाव हो

जाता है। लोग दोनों वक्त हाजिरी देते हैं और न सही तो यह नम है कि म्यूनिसपलटी के लैम्प (लालटेन) जलाने वालों का जमघट घर पर रहता है। जिससे जो काम चाहा ले लिया, जहाँ जी चाहा भेज दिया। यदि मेम्बरी न होती तो इतने नौकर कहां से मिलते। यह लोग म्यूनिसपलटी में इस कारण सम्मिलित नहीं होते कि वह नगरवासियों के दुख सुख की ओर ध्यान देंगे किन्तु शासन प्रभाव, आतंक और अधिकार का विचार उनको उस ओर ले जाता है। यह उसको इतना आवश्यक समझते हैं कि घूँस तक दे देते हैं और उचित अनुचित दबाव डालकर रायें (सम्मति) ले लिया करते हैं। तुम जानते हो इसका क्या परिणाम होता है? सभ्यता की मृत्यु, अध्यात्मिक मृत्यु, धार्मिक मृत्यु! न इनमें सभ्यता होती है न परमार्थ रह जाता है और धार्मिक भाव तो लेश मात्र भी नहीं रह जाते। ऐसे मनुष्य को तुम क्या कहोगे जो अधिकार का भूखा है। उस मनुष्य से सदैव घृणा करना चाहिये। यह वह संसारी कुत्ता है जो एक ग्रास के लिये मनुष्यों के टांगों को काट खायगा और काटते समय तनिक भी विचार न करेगा कि यह उचित है अथवा अनुचित है। दरबारों में इसी के लिये षडयंत्र रचे जाते हैं, खुशामदें की जाती हैं, घूंस दी जाती हैं, काना फूसी की जाती है, गुटबन्दी की जाती है, विद्रोह की अग्नि प्रज्वलित रहती है, अपने जत्था के दृढ़ करने और शत्रु की शक्ति को कुचलने का सदैव ध्यान रहता है। सब कुछ चला जाय परन्तु अधिकार न जाने पाये। यदि शासन नहीं तो कुछ भी नहीं। यह शब्द सदैव मुख पर रहते हैं।

परन्तु इस अधिकार में प्राप्त क्या होता है? क्या इससे आनन्द मिलता है? क्या यह मनुष्य को शान्ति देता है? उत्तर मिलेगा कदापि नहीं। फिर जब सुख नहीं, शान्ति नहीं, तो फिर क्यों मनुष्य उसके पीछे जान देते हैं। मन कहता है लोभ अन्धा कर देता है।

भौंरा प्रेमी प्रेम का, कली कली रस ले।
काँटा लागा प्रेम का तड़प तड़प जिय दे॥

इनको अधिकार का प्यार है। प्यार अन्धा कर देता है। ऊँचा नीचा बुरा भला, हानि लाभ, समझने की बृद्धि नहीं रहती। जैसे पतिंगा दीमक की ज्योति पर जलता है वैसे ही अधिकार प्रिय मनुष्य अधिकार के लिये जान देते हैं और उसके पीछे मिट जाते हैं। इतिहास में अधिकार के प्रमियों की उपमायें बहुधा मिलेंगी।

———

विनती

दुखदाई जग में आन फँसा, भवसागर नाव न बेड़ा है।
मँझधार में टूटी नाव पड़ी, सब दायें बायें अँधेरा है॥
साथी संगी सोने वाले, अति घोर नींद में मतवाले।
है भवर का खटका आठ पहर, दुख आपत्ति विपत्ति ने घेरा है॥
चित चैन न मन को शान्ति है, व्यापा आलस अरु भ्रान्ति है।
खेवट भी पास नहीं कोई, लहरों का हेरा फेरा है॥
नभ मंडल काली घटा छाई, बादल बरसे रिम झिम आई।
क्या करूँ उपाय नहीं सूझे, मन में अव त्रास घनेरा है॥
राधास्वामी दया की दृष्टि करो, मेरा सब संकट अरु विपति हरो।
एक आस तुम्हारी है केवल, हो मेहर मेहर का बेरा है॥

———

॥ मनुष्य बनो ॥

"मनुष्य बनो" (हिन्दी मासिक पत्र) समाचार पत्र (केन्द्रीय) अधिनियम १९५६ नियम ८ फार्म ४ के अनुसार आपेक्षित आवश्यक सूचना

१—प्रकाशन का स्थान	:	अलीगढ़
२—प्रकाशन अवधि	:	मासिक
३—मुद्रक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
क—राष्ट्रीयता	:	भारतीय
ख—पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़। उत्तर प्रदेश
४—प्रकाशक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर अलीगढ़
५—सम्पादक का नाम		श्री श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता		भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़
६—स्वत्वाधिकारी	:	श्रीमती सुधा मीतल
संरक्षक	:	परमदयाल फकीरचन्द जी महाराज

७—मैं सुधा मीतल घोषित करती हूँ कि उपर्युक्त विवरण मेरी जानकारी और विवरण के अनुसार सही है।

दिनांक १५ अक्टबर, १९७८

सुधा मीतल
प्रकाशक के हस्ताक्षर

..d. No. L-ALG-28

पुस्तकें

हमारे यहां

महर्षि शिवव्रतलाल जी महाराज

कृत

हिन्दी की आध्यात्मिक, धार्मिक, स्त्री उपयोगी, स्वास्थ्य व मनोविज्ञान सम्बन्धी पुस्तकें तथा 'शाही' और 'मोती' सिलसिले के उपन्यास तथा रामदयाल फकीरचन्द जी महाराज कृत उच्च कोटि की अमूल्य पुस्तकें मिलती हैं।

पूरा सूचीपत्र मंगायें।

डाक खर्च सब का अलग है।

पुस्तकें रजिस्टर्ड डाक या रेल से भेजी जाती हैं।

मिलने का पता :—

कार्यालय

मनुष्य बनो

शिव भवन, लेखराजनगर,

अलीगढ़ (उ० प्र०)

पुस्तक सं० 1210

Sri Vitthal Aryan Rao
Gouli Gudda Banswada
Tq. Banswada
Dist. Nizamabad AP

अ० सं० सम्पादक — ...
व्यवस्थापक व प्रकाशक
श्रीमती सुधा मीतल
शिव भवन, लेखराज नगर
अलीगढ़।

Printed by S. Mittal, Data Dayal Printers, Aligarh